# शुभ का हो वरण

**प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,**

**पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान**

शुभ का अर्थ है पुण्य की प्राप्ति। अशुभ का अर्थ है पाप। संसार में द्वन्द्व की स्थिति है। शुभ–अशुभ, उचित–अनुचित सर्वत्र व्याप्त है। एक रचनात्मक है तो दूसरा नकारात्मक है। रचनात्मक प्रवृत्ति का ही वरण करना चाहिए। संसार में हेय, ज्ञेय और उपादेय का बहुत महत्व है। हेय त्याज्य है, ज्ञेय ग्रहण करने योग्य हैं, उपादेय प्रयोग करने हेतु है। शुभ जीवन में कैसे ला सकते है? इसका सदैव प्रयास करना चाहिए। चौरासी लाख जीव योनियां हैं। सभी अपने धर्म और कर्म के अनुसार जीवन–यापन कर रहे है। शुभ करने पर शुभ की प्राप्ति होती है और अशुभ करने से अशुभ की प्राप्ति होती है। अशुभ कोई नहीं चाहता फिर भी अशुभ हो जाता है। ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए होता हैं कि हमने पूर्वजन्म में किसी को दुःख दिया था इसलिए हमें उसके परिणाम के रूप में दुःख की प्राप्ति होती है। सब प्राणियों के प्रति शुभ की भावना रखने से स्वयं शुभ होता है।

भारतीय संस्कृति में कहा गया है कि–

**सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।**
**सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग् भवेत्।।**

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सभी कल्याण का दर्शन करें। किसी भी प्राणी को किसी भी प्रकार का दुःख न हो। सफेद कोट अर्थात् डॉक्टर, काला कोट अर्थात् वकील, खाकी कोट अर्थात् पुलिसवालों के पास जाने की नौबत ना आवें। ईश्वर से यह प्रार्थना करनी चाहिए कि टकराव को टालिये। टकराव से अशुभ प्रवृत्तियां पनपती हैं। अच्छा सोचो, अच्छा देखो और अच्छा सुनो। इसीसे सदाचार का विकास होता है। सदाचार का विरोधी कदाचार है। सदाचार यदि अनुष्ठेय है तो दुराचार हेय है। दुराचार मानव के पतन का प्रमुख कारण है। इसलिये यह सर्वतोभावेन त्याज्य है। सदाचार से मनुष्य प्रेय के साथ–साथ श्रेय को प्राप्त करता है, किन्तु कदाचार से किसी प्रकार प्रेय का लाभ हो भी जाय, तो भी वह अधोगति का मूलकारण होता है। सदाचारी आचार का पालन करते हुये श्रेयस् को प्राप्त करता है, और अन्त

में परमगति को प्राप्त करता है–'आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम्। श्रेय और प्रेय दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं। बुद्धिमान् मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भलीभांति विचार करके उनको पृथक्–पृथक् समझ लेता है। बुद्धिसम्पन्न मनुष्य परमकल्याण के साधन श्रेय को ही श्रेष्ठ समझकर ग्रहण करता है, परन्तु मन्द बुद्धि मनुष्य लौकिक योगक्षेम की इच्छा से भोगों के साधन रूप प्रेय को अपनाता है। भारत प्रारम्भ से ही विभिन्नताओं का देश रहा है; किन्तु यहां की सांस्कृतिक उदात्तता के कारण इनमें एकता का ही स्वर मुखर रहा। उपनिषदों में कहा गया है कि जो दुश्चरित्र हैं, जिनका मन अशान्त और विक्षिप्त है, वे प्रज्ञान द्वारा भी आत्मा को नहीं प्राप्त कर सकते हैं ऐसे लोगों को बार–बार इस भवसागर में जन्म और मरण के बन्धन में बधना पड़ता है। पांच यमों और पांच नियमों में सभी प्रकार के सदाचार का अन्तर्भाव हो जाता है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, दया, सरलता, क्षमा, धृति, मिताहार और शुचिता–ये दस यम हैं तथा तप, सन्तोष, आस्तिकता, दान, ईश्वरपूजन, शास्त्रीय सिद्धान्त का श्रवण, लज्जा मति, जप एवं व्रत ये दस नियम हैं। शीतोष्णाहार, निद्रा पर विजय, सर्वदा शान्ति, निश्चलता तथा विषयेन्द्रियनिग्रह–ये यम हैं तथा गुरुभक्ति, सत्यमार्गानुरक्ति, मनोनिवृत्ति, सुखागत वस्तु आत्मा का अनुभव, सन्तोष, निसंगता, एकान्तवास, कर्मफल की अभिलाषा का न होना तथा वैराग्य–ये नियम हैं। सदाचार के रूप में पालनीय धर्मों का वर्ण, आश्रम, आयु, अवस्था, जाति, लिंग आदि भेद से वर्णन किया जा सकता है। सत्यनिष्ठा, सत्यव्रत एवं सत्याचरण के अभाव में सभी व्रत, कर्म एवं 'आचरण' निष्फल हो जाते हैं। 'सत्य' ही ब्रह्म है, सत्य ही धर्म है। इस सत्य धर्म से बढ़कर कुछ नहीं है। आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् अर्थात् जो अपने प्रतिकूल हो वैसा आचरण दूसरे प्राणियों के साथ नहीं करना चाहिए। मानव–मानव से प्रेम करना सदाचार का सबसे अच्छा उदाहरण है। जियो और जीने दो की भावना में सदाचार परिलक्षित होता है। पृथ्वी पर जितने भी प्राणी हैं सबमें आत्मदर्शन करना और सबको अपने समान मानना सदाचार का लक्ष्य है। सदाचार में जीव हिंसा का पूर्णतः निषेध रहता है। अहिंसा परमोधर्मः अर्थात् अहिंसा ही सबसे बड़ा धर्म है, इसके समान और कोई धर्म नहीं है, यह समझकर सभी प्राणियों में जीवदृष्टि से विचार करना सदाचार है।

मनुष्यों में शुभ का वरण कैसे हो? इस विषय पर चिंतन बहुत जरूरी है। मानव समाज में रहता है और समाज के सुख–दुःख, अनुकूल–प्रतिकूल परिस्थितियों से प्रभावित होता है। मानव और पशु में अंतर यह है कि मानव ज्ञेय, हेय और उपादेय को जानता है। किन्तु पशु में बुद्धि नहीं होती। इसलिये वह इन तत्वों को नहीं जानता। मानव और पशु में इन्द्रियां समान है। किन्तु बौद्धिकता ही एक ऐसा तत्व है जो मानव और पशु में अंतर करता है। **"परस्परोपग्रहोजीवानाम्"** का सिद्धान्त ही मानवीय मूल्य की मुख्य धुरी है, जिसमें मानवीय मूल्यों का पर्याप्त पोषण किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य है इसी जीवन में मानव का कल्याण। आचार शुद्धि, व्यवहार शुद्धि और विचार शुद्धि के आधार पर मनुष्य मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा कर सकता है। मानव स्वभावतः विवेकशील है। वेदों में तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु की कामना की गई है।